ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 205-208
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

भारतीय दलित आंदोलन एवं बहुजन समाज पार्टी का उद्‌भव

प्रेम सागर
शोध अध्येता– सेंट एण्ड्रयूज कॉलेज ,गोरखपुर (दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर) (उ0प्र0) भारत

Received-17.03.2025, Revised-22.03.2025 Accepted-30.03.2025 E-mail : premsagar.rao20@gmail.com

सारांशः अस्पृश्य जातियों से संबंधित शब्द इस बात के साक्षी है कि संसार के लगभग सभी देशों में एक ऐसा वर्ग था जो समाज के निम्नतम स्थान पर रखा गया था। यह आदमी तो थे, पर इन्हें मनुष्य नहीं माना जाता था इनका जीवन गुलामी की तरह था। पशु से भी गिरी इनकी दशा थी। समाज में इनकी कोई प्रतिष्ठा नहीं थी। शताब्दियों तक इन्होंने सामंतवादी व्यवस्था मैं दासो की तरह जीवन व्यतीत किया और आज भी इनकी कोई बहुत अच्छी स्थिति नहीं है, फिर भी इनमें राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक आधार पर जो चेतना जन्मी है वह अपने अस्तित्व और पहचान के लिए संघर्ष कर रही है। इस संघर्ष को दलित आंदोलन का नाम दिया गया।

बहुजन समाज पार्टी के निर्माण की प्रेरणा श्री मान्यवर कांशीराम जी दलितों के मसीहा एवं संविधान निर्माता डॉ भीमराव अंबेडकर जी से लिए थे। मान्यवर कांशीराम जी दलित राजनीतिक चेतना जागृत करने तथा उनमें टो की कीमत समझने का पूरा प्रयास करते थे। मान्यवर कांशीराम जी बामसेफ एवं के फ़ोर जैसे संगठन बनाकर दलित एवं बहुजनों को एकत्रित करने का प्रयास किए तत्पश्चात कांशीराम जी ने बहुजन समाज पार्टी का गठन 14 अप्रैल 1984 को किया।

कुंजीभूत शब्द– दलित आंदोलन, दलित जातियां, दलित राजनीतिक चेतना, बामसेफ, संगठन, वन मैन–वन वोट, वन वैल्यू

प्रस्तावना– दलितों में तीव्र गति से जागृत होती दृढ़ संकल्पना आज भारतीय समाज की सत्यता है और यह सत्य है कि यह पूर्व सदी के अंतिम 10 वर्षों में और भी तेजी से बढ़ी है । इस दृढ़ संकल्पना को हम दलितों के प्रत्येक क्षेत्र में देख सकते हैं, चाहे वह सांस्कृतिक जीवन हो या फिर आर्थिक अथवा राजनैतिक । उपरोक्त सभी क्षेत्रों में दलितों ने अपने अधिकारों हेतु संपूर्ण भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता पर एक प्रश्न चिन्ह लगाया, जिसके लिए उन्हें सतत संघर्ष करना पड़ा है। इस संघर्ष ने आज सवर्णो को, दलितों को सत्ता के उन उच्च पदों पर स्वीकार करने पर मजबूर कर दिया है जिसका हम स्वप्न भी नहीं देखते थे ।

स्वतंत्र भारत के इतिहास में दलितों को सत्ता के इतने शिखर पदों पर एक साथ काबिज होते पहली बार देखा जा रहा है। सर्वप्रथम इस दशक में एक दलित पहले उपराष्ट्रपति तथा बाद में भारत के राष्ट्रपति के पद पर असीन हुआ। एक दलित का पहला देश का उपराष्ट्रपति और फिर राष्ट्रपति बना भारतीय समाज में ऐतिहासिक घटना है। दूसरी और एक अन्य दलित का लोकसभा का अध्यक्ष बनना एक और ऐतिहासिक घटना है। इसी कड़ी में अगर हम भारतीय गणतंत्र में चार राज्यों के दलित राज्यपालों की एक साथ नियुक्ति की परीक्षण करें, तो हम इसे भी एक ऐतिहासिक घटना ही कहेंगे। इतना ही नहीं कुछ समय पूर्व तक संसार के सबसे बड़े गणतंत्र की दो राष्ट्रीय पार्टियों यथा बहुजन समाज पार्टी एवं भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष दलित थे। वर्तमान में भी दो राष्ट्रीय पार्टियों के अध्यक्ष दलित हैं। बहुजन समाज पार्टी की अध्यक्षता सुश्री बहन कुमारी मायावती एवं कांग्रेस के अध्यक्ष मल्लिका अर्जुन खड़गे। इसके अतिरिक्त भारत की केंद्रीय एवं राज्य सरकारों में अनेक कैबिनेट मंत्री दलित समाज के लोग हैं, जिनकी सूची तैयार कर पाना आसान नहीं है।

दलित आंदोलन की उत्पत्ति को अक्सर लोग डॉक्टर अंबेडकर के संघर्ष के साथ जोड़कर देखते हैं, जो एक गलत अवधारणा है। वास्तविकता में बाबा साहेब डॉक्टर अंबेडकर के पहले भी अनेक दलित समाज सेवीयों ने भारत के विविध प्रांतों में संघर्ष किया था। महाराष्ट्र में सबसे पुराने एवं चर्चित आंदोलनकारीयो में किशन फूगूजी वनसोड़े (1870–1947) गोपाल बाबा वॉलंकर, कालीचरण नंद गवली (1886–1962) । आदि दलित आंदोलन को आगे बढ़ा रहे थे। दक्षिण भारत में दलित आंदोलन को दिशा देने वालों में भाग्य रेड्डी वर्म, उत्तर भारत में आदि आंदोलन को हवा देने वाले अछूतानंद (1879–1993) ज्वेस्जेसमेंयर (1982),नंदिनी गुप्ता।

दलित आंदोलन का प्रथम चरण– दलित आंदोलन का प्रथम चरण बाबासाहेब डॉक्टर भीमराव आंबेडकर के दलित आंदोलन के उदय के साथ ही खत्म हो गया। डॉ अंबेडकर ने दलितों की समस्याओं के निराकरण हेतु शिक्षा एवं राजनैतिक अधिकारों के हथियार के जरिए लड़ने का प्रयास किया। डॉ आंबेडकर की यह यात्रा सन 1911 से ही शुरू हो गई थी । सर्वप्रथम इस वर्ष वे साउथबरो कमेटी के समक्ष दलितों का पक्ष रखने हेतु प्रस्तुत हुए। इसके पश्चात उन्होंने 'मुकनायक' समाचार पत्रिका का संपादन शुरू किया और फिर सन 1920 में दो दलित रेलियों को संबोधित किया। इन सब कृतियों से डॉक्टर आंबेडकर ने अपने आपको दलितों का निर्विवाद नेता साबित कर दिया। एक ऐसा नेता जो आधुनिक शिक्षा एवं ज्ञान के आधार पर दलितों की लड़ाई लड़ने के लिए तत्पर तथा पूर्ण रूप से सक्षम था। (जीलियट 1992(गोरे–1993)।

दलित आंदोलन का द्वितीय चरण– दलित आंदोलन के दूसरे चरण में डॉक्टर आंबेडकर ने दलितों को एक समुदाय के रूप में नवीन पहचान दी। उन्होंने इस समुदाय को अल्पसंख्यक के रूप में दिखाया और बाद में लंदन में आयोजित गोलमेज कांफ्रेंस में इस बात को साबित भी किया कि दलित वास्तव में अल्पसंख्यक हैं, क्योंकि उन्हें कोई भी सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक अधिकार प्राप्त नहीं है। न तो हिंदू समाज दलितों को अपने मंदिर में पूजा करने देता है, न ही ब्राह्मण दलितों के घर पूजा करने आते हैं। बाबा साहब ने दलितों की भारतीय गांवों में स्थिति का उदाहरण देते हुए यह बात साबित कि की दलित किस प्रकार हिंदू समाज में बहिष्कृत जीवन जीने को मजबूर है। अत दलित को जब हिंदू समाज के कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं है और उन्हें हिंदू समझ ही नहीं जाता है, तब उन्हें अल्पसंख्यकों की तरह पृथक निर्वाचन दे देना चाहिए। (आंबेडकरः 1982) परंतु महात्मा गांधी ने इस बात पर आमरण अनशन कर दिया जो की सन् 1932 में पूना पैक्ट में परिवर्तित हो गया और दलितों को पृथक निर्वाचन की जगह आरक्षण की सुविधा मिली, जो आज तक बराबर लागू है। इस तरह बाबा साहब डॉक्टर आंबेडकर दलितों को राजनैतिक अधिकार दिलाने में कामयाब हुए परंतु वे इससे संतुष्ट नहीं थे।

बाबा साहेब डॉक्टर भीमराव आंबेडकर ने अपने संघर्ष के दौरान दलितों को राजनैतिक अधिकार ही नहीं दिलवाये, वरन् उन अधिकारों को प्राप्त करने हेतु वैचारिक आधार एवं संगठन भी विकसित किए। सर्वप्रथम उन्होंने सन् 1936 में 'स्वतंत्र मजदूर पक्ष'

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

(इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी) के नींव डाली। कालांतर में भारत के विभिन्न प्रांतो को एक सूत्र में पिरोने के लिए उन्होंने सन 1942 में 'अखिल भारतीय शेड्यूल कास्ट फेडरेशन' की स्थापना भी की। उसके पश्चात बाबा साहब ने अपने जीवन काल में ही 'रिपब्लिकन पार्टी, की रूपरेखा भी तैयार कर ली। इस विषय में उन्होंने राम मनोहर लोहिया एवं अन्य राजनीतिज्ञों से गहरा विचार विमर्श भी किया था, परंतु उनके अकाल महापरिनिर्वाण के कारण आर0 पी0आई0 का गठन 1957 में ही संभव हो सका ।

जयश्री गोखले अपनी पुस्तक 'फ्रॉम कंसेशन टू कंसंट्रेशन' 1993 में लिखती है कि यद्यपि राजनीतिक तौर पर यह दल बहुत सफल नहीं हुए थे परंतु इन दलों ने ऐसी परंपरा की नींव डाली जिसने दलितो को लामबंद करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। दलों का आधार मानकर नित नवीन संगठन खड़े किए जा रहे हैं जो दलितों में राजनीतिक चेतना का प्रसार अत्यंत सफलता से कर रहे हैं (गोखलेः 1993:13)। राजनीतिक चेतना से ही दलित हुक्मरान बन सकता है इस पाठ को भी बाबा साहब ने अपने अनुयायियों में फैलाया। राजनीतिक चेतना से ही राजनीतिक शक्ति आती है और राजनीतिक शक्ति से ही दलित अपना अपने सब कठिनाइयां दूर कर सकते हैं डॉक्टर अंबेडकर भली भांति जानते थे। अतः उन्होंने राजनीतिक आरक्षण मांगते समय राज्य एवं केंद्र की कैबिनेट में भी (आंबेडकर 1991)। बाबा साहब ने 25 अप्रैल 1948 को लखनऊ में दलितों का आह्वान करते हुए कहा था राजनीतिक शक्ति ही आपके दलितों के सर्वांगीण विकास की चाबी है। (गोरे 1999:213) अतः डॉक्टर आंबेडकर द्वारा सन 1955 तक दलितों का राजनीतिककरण करने का प्रयास किया गया और इसमें दो राय नहीं कि वह उसमें कुछ हद तक सफल भी रहे।

दलित आंदोलन का तीसरा चरण– अतः दलित आंदोलन के तीसरे चरण में दलित आंदोलन दो भागों में पुनः बट गया यद्यपि यह अलगाव पहले दो चरणों में विद्यमान था दलित आंदोलन की एक शाखा कांग्रेस एवं सवर्ण जातियों से युक्त पार्टियों से मिलकर दलितोंत्थान को दिशा देने लगी तथा दूसरी शाखा ने अपनी स्वतंत्र रूप विकसित किया। आज दलित आंदोलन की स्वतंत्रता शाखा के रूप में हम बहुजन समाज पार्टी,, आर0पी0आई0 एवं कहीं–कहीं दलित पैंथर्स को रख सकते हैं।

बाबा साहेब की वैचारिक क्रांति के कारण अपरेश स्वतंत्र दलित नेतृत्व ने जब दलितों के आर्थिक राजनीतिक सामाजिक अधिकारों की लड़ाई तेज की तो कांग्रेस ने सोशल इंजीनियरिंग के माध्यम से इन दलित पार्टियों विशेषकर आर0पी0आई0 का एजेंडा ही आत्मसात कर लिया (मेंडलसन एवं विकजियानी 1998 :213)। इतना ही नहीं कांग्रेस ने दलित लीडरों को भिन्न–भिन्न प्रकार के प्रलोभन देकर अपने दल में मिल लिया जिससे पूरा दलित आंदोलन है खत्म हो गया । (वहीः 213) । इसके उपरांत सन 1972 में ऊंचे दलित पैंथर्स के बीच दशा हुई। यद्यपि दलित पैंथर्स ने दलित आंदोलन के माध्यम से दलित साहित्य से जरूर परिचय कराया। अगर हम काहे की सन 1960 के दशक में दलितों में उभरे वैचारिक प्रसन ने दलित साहित्य को और इस साहित्य ने 1970 के दशक में दलित पैंथर्स के आंदोलन को जन्म दिया तो कोई अतिशयोक्ति न होगी परंतु दलित पैंथर शीघ्र ही खंड – खंड हो गया। कुछ आंतरिक कलह के कारण और कुछ कांग्रेस की कूटनीति के कारण (गोखले 1993 : 227)। पैंथर्स के नेताओं में जो विवाद का मुख्य मुद्दा था वह विचारधारा का था। कुछ दलित अंबेडकर बात को ही अपने विचारधारा का मूल मानते थे। कुछ अंबेडकरवाद तथा मार्क्सवाद के मिश्रण का पैंथर्स की विचारधारा का मूल बनाना चाहते थे। बस फिर क्या था, विचारधारा से ही आंदोलन का पहला बटवारा हुआ और पूरा आंदोलन बिखर गया।

उत्तर प्रदेश में दलित साहित्य एवं संस्कृति आंदोलन– बसपा के उदय के बाद उत्तर प्रदेश में दलित राजनीति में दलित सांस्कृतिक एवं साहित्यिक आंदोलन को एक नवीन दिशा प्रदान की है। दलित साहित्य आज भारत के प्रत्येक प्रांत में प्रांतीय भाषा में बढ़ता जा रहा है। हिंदी भाषी क्षेत्र उत्तर प्रदेश में आज ;ह लेखन दलित समाज के नवयुवक, अवकाश प्राप्त कर्मचारी अधिकारी, स्कूल शिक्षक एवं राजनैतिक नेताओं द्वारा किया जा रहा है। आज उत्तर प्रदेश में छोटे–छोटे सेमिनार, काव्य •ेष्ठि;ां, चर्चाएं दलित समाज में तेजी से जागृति होती चेतना का द्योतक है। इतना ही नहीं इस चेतन की अभिव्यक्ति ने सांकेतिक रूप से संगठन का चोला पहन लिया है। 'दलित साहित्य सम्मेलन' एवं दलित हिस्ट्री कांग्रेस, वार्षिक कार्यक्रम बन गए हैं जो तथाकथित मुख्य धारा के साहित्य एवं इतिहास पर बड़ा प्रश्न चिन्ह है। इसी क्रम में जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी में मार्च 1999 में समाजशास्त्र की अंबेडकर पीठ द्वारा आयोजित सेमिनार 'इंडिया एट द टर्न ऑफ सेंचुरी : पर्सपेक्टिव फ्रॉम बिलोः भी उल्लेखनीय है। इस सेमीनार में देश के वरिष्ठ समाजशास्त्रियों ने अंत में स्वीकार किया की मुख्य धारा के समाजशास्त्र ने दलितों की समस्याओं पर गंभीरता पूर्वक ध्यान नहीं दिया है। आतः उनकी समस्याओं के अध्ययन हेतु एक नवीन दृष्टिकोण की आवश्यकता है सेमिनार प्रोसिडिंग 1999 ज0 ने0 वि0। में सेमिनार तथा संगोष्ठियों तथा गोष्ठियों में उत्तर प्रदेश में बसपा द्वारा किए गए कार्यो की समीक्षात्मक आलोचना बसपा के वजूद को और पुख्ता करती है।

संस्कृत के क्षेत्र में उत्तर प्रदेश में विशेष कर दलित आंदोलन द्वारा विभिन्न दलित महापुरुषों की जीवनी पर मेले का आयोजन करके एक नई परंपरा की शुरुआत की गई है जिसमें बसपा की अग्रणी भूमिका रही है। अंबेडकर पेरियार साहू जी पहले बिरसा मुंडा गुरु घासीदास आज मेलों का आयोजन कर दलित समुदाय को हिंदू समाज के विभिन्न पर्वों पर आयोजित होने वाले मेलों से दूर रखने का प्रयास आरंभ किया गया और बाद में बसपा ने इसे आगे बढ़ाया।

बहुजन समाज पार्टी का उद्भव– दलित संघर्ष के तीसरे चरण में सन 1978 में बामसेफः बैकवर्ड, एससी, एसटी, ओबीसी एंड माइनॉरिटीज कम्युनिटीज एम्पलाइज फेडरेशन ने दलितों में एक स्वतंत्र नेतृत्व को जन्म दिया जो कांग्रेस विचारधारा एवं पार्टी से अलग थी। आरंभ में बामसेफ के पास 20 हजार सदस्य थे जिनमें 15000 वैज्ञानिक एवं 3000 डॉक्टर थे (जेफरलॉट : 1999)। बामसेफ के माध्यम से इसके संस्थापक कांशीराम ने 'पे बैक टू दी सोसायटी' का नारा दिया, यानी जिन दलितों ने दलित समाज से लाभ लिया उनका कर्तव्य बनता है कि अगर वह इस स्थिति में पहुंच गए हैं कि वह समाज को कुछ दे सकते हैं तो अवश्य दें। बामसेफ के कारण दलित आंदोलन में पहली बार ऐसा हुआ कि दलित मध्यम वर्ग में समाज को कुछ दिया अन्यथा मध्यम वर्ग भी सवर्ण मध्यम वर्ग की भांति समाज लेना ही जानता था देना नहीं। बामसेफ के संस्थापक ने अपने आंदोलन को और तेज करने के लिए 6 दिसंबर 1981 को दलित शोषित सं?ार्ष समिति (वे4) की स्थापना की एवं राजनीति में भी कदम रखा । मान्यवर कांशीराम ने इस संगठन से स्वनिर्भर दलित राजनीति की नींव डाली और उन्होंने ऐसे नारे गढे जिससे जनतांत्रिक राजनीति के प्रति उनकी प्रतिबद्धता प्रमाणित होती है। बैलेट बॉक्स (यानी की मत पेटी) के माध्यम से यानी कि वोटो के माध्यम से परिवर्तन लाना चाहते थे। मान्यवर कांशीराम शुरू के दिनों में अपने कैडर कैंपों में तथा बाद में अपनी जनसभा में प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सभी व्यक्तियों के वोट की कीमत एक होती है को एक समीकरण के माध्यम से समझाते थे।

"वन मैन = वन वोट = वन वैल्यू"। अर्थात सभी नागरिकों को एक वोट देने का अधिकार प्राप्त है, भारत के हर नागरिक के वोट की कीमत बराबर होती है। यह नहीं की सव.ा समाज या अमीर लोगों के वोट की कीमत ज्यादा होती है और दलित तथा गरीबों

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

के वोटो की कीमत कम। अतः दलित, पिछड़ों तथा अल्पसंख्यकों को यह सोचना चाहिए कि उनके समाज के वोटो की संख्या सवर्ण समाज के वोटो से ज्यादा है। जनता को सवर्ण समाज की चालाकी बताने और अपने भोलेपन का अहसास कराने हेतु ही उन्होंने "वोट हमारा, राज तुम्हारा, नहीं चलेगा, नहीं चलेगा, का नारा दिया अर्थात वोट दलितों अल्पसंख्यकों तथा पिछड़ों का और सत्ता पर स्वर्ण का राज, यह अब नहीं चलेगा । इस व्यवस्था को जल्द से जल्द खत्म करने का उन्होंने प्रण लिया । इस नारे के माध्यम से कांशीराम दलितों, पिछड़ों और अल्पसंख्यकों यानी की बहुजनों में चेतना जगाना चाहते थे कि बहुजन समाज अपने वोटो का उपयोग राजनीतिक समझदारी से करें। मान्यवर साहब का मानना था कि बहुजन समाज अपने वोटो का उपयोग बिना सोचे समझे करता है तथा यूं ही किसी भी पार्टी को अपना मत दे देता है। जिससे सवर्ण समाज सत्ता में बना रहता है। परंतु बहुजन समाज अगर सावधानी से अपने वोटो का उपयोग करें तो वह खुद सत्ता में आ सकता है। तथा वह खुद हुक्मरान या राज करने वाला बन सकता है। मान्यवर कांशीराम के वोटो की शक्ति में विश्वास तथा प्रजातंत्र में आस्था को हम एक अन्य नारे से भी प्रमाणित कर सकते हैं। यह नारा है –

"वोट से लेंगे पी0एम0–सी0एम0" "आरक्षण से लेंगे एस0पी0–डी0एम0"

मान्यवर कांशीराम ने प्रजातंत्र में वोटो की कीमत तथा उसके सही प्रयोग के बारे में ही बहुजनों को जागृत किया बल्कि उन्होंने उन्हें भागीदारी के लिए भी जगाया। प्रजातंत्र में जहां संख्या बल का बोलबाला होता है वहीं पर प्रत्येक समुदाय की संख्या के आधार पर शासन प्रशासन तथा देश के संसाधन में उसकी भागीदारी या हिस्सेदारी भी सुनिश्चित होनी चाहिए। तभी सच्चा प्रजातंत्र आएगा। किसी कल्पना को रेखांकित करते हुए मान्यवर कांशीराम जी ने निम्न नारा दिया ।

"जिसकी जितनी संख्या भारी उसकी उतनी हिस्सेदारी है।"

उपरोक्त नारे का मतलब साफ है कि समाज में रह रहे हर सबों को शासन प्रशासन तथा देश के संसाधन में उसे समाज की जनसंख्या के अनुपात में ही प्रतिनिधित्व या हिस्सेदारी मिलनी चाहिए। यह कल्पना जनतांत्रिक व्यवस्था को व्यावहारिक रूप प्रदान व्यावहारिक रूप देने का सबसे कारगर कदम माना जा सकता है।

Ds4 की इस सफलता से प्रेरित होकर कांशीराम ने 14 अप्रैल, 1984 का बहुजन समाज पार्टी बसपा का गठन कर दलित आंदोलन को नयी दिशा दी। आज 2001 में राष्ट्रीय पार्टी है और भारतीय समाज में पहली बार ऐसा हुआ है कि एक दलित द्वारा बनाए गए राजनीतिक पार्टी को राष्ट्रीय दल का स्तर मिल सका है। उत्तर प्रदेश के दलित आंदोलन तो भारतीय जनतांत्रिक व्यवस्था का एक रूप है प्रतिनिधित्व जनतंत्र रिप्रेजेंटेटिव डेमोक्रेसी का अब भागीदारी जनतंत्र पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी की ओर बढ़ना । वैसे दलित आंदोलन की जनतांत्रिक प्रकृति का योगदान है। एक दशक पूर्व में दलितों का प्रतिनिधित्व सर्व.ा सत्ता/ाारी वर्ग किया करते थे या फिर उनके द्वारा रोपे गए कुछ दलित नेता। परंतु उत्तर प्रदेश में बसपा के उदय के बाद दलितों ने अपना ,जेंडा खुद तय किया और चार सरकारों में 1993, 1995 (साढे चार माह के लिए) और 2001 में 16 महीने और 2007 – 2012 के कार्यकाल में अपनी शर्तो पर राज करने का प्रयास किया 1995 में सरकार बनाने के बाद स्वतंत्र भारत में पहली बार दलित महिला मायावती ने अपनी 11 वर्ष पुराने पार्टी की नीतियों के आधार पर निर्णय लिए। कुछ दलितों को उत्तर प्रदेश का मुख्य सचिव एवं पुलिस महानिदेशक नियुक्त किया गया। बहुतों को जिलाधिकारी एवं पुलिस अधीक्षक बनाया गया।

साहित्य समीक्षा–

1. दलित आंदोलन के इतिहास में दलितों द्वारा अपनी पृथक राजनीतिक अस्मिता हेतु अनेक प्रयास किए गए हैं। बाबा साहेब डॉक्टर अंबेडकर ने दलित आंदोलन की शुरुआत समाज सुधार से ही की थी, जिसमें 20 मार्च 1927 में चावदार महाड़ सत्याग्रह, मनुस्मृति का दहन 2 मार्च 1930 से काला राम मंदिर सत्याग्रह आदि प्रमुख थे।

डॉ विवेक कुमार, बहुजन समाज पार्टी एवं संरचनात्मक परिवर्तन, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, 2004

2. मान्यवर कांशीराम जी ने कहा था कि हम बहुजनों को क्लर्क नहीं होने हुक्मरान बनाना चाहते हैं तो उन्होंने अपने लिए कुछ नहीं किया सिर्फ देशवासियों के लिए और बहुजन समाज के लिए किया है इस देश की परिस्थितियों मान्यताओं परंपराओं ने कांशीराम को अनेक कार्य के दौरान बहुत दुख पहुंचा उनके अभिन्न साथियों ने भी उनका विरोध किया और अलग–अलग झुंड बनाने शुरू किया चौतन्य समाज को वरगलाना शुरू किया, काल भैरव छोड़कर भाग गए। अगर इतिहास के पन्नों को पेट्रोल कर देखा जाएगा तो तमाम महापुरुषों के बाद मान्यवर कांशीराम जी की ऐतिहासिक पुरुष के नाम से स्वर्ण अ(ारों में अंकित किए जाएंगे । मैंने काशीराम जी का त्याग और बलिदान और डी पी रहा है।

नरेश बाबू बौद्ध, बाबा साहब की कहानी और काशीराम की कुर्बानी, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली 2004

3. बहुजन समाज पार्टी के आंदोलन का वस्तुनिष्ठ आकलन ज्यादातर बुद्धिजीवी संवाद एवं दलित बसपा के आंदोलन को समझने में कामयाब नहीं हो पा रहे हैं। कुछ जानबूझकर कुछ अनजाने में परंतु दुसाध भारतीय समाज में बसपा के कार्यक्रम को समग्रता तथा उसके निहितार्थ को भली भारत समझते हैं दुसाध जी बसपा के संस्थापक कांशीराम को भारतीय समाज का चिकित्सक तथा बसपा को संरचनात्मक परिवर्तन का संवाहक मानते हैं।

एच एल दुसाध, सामाजिक परिवर्तन और बीएसपी, सम्यक प्रकाशन, 2005 ,2012 , 2021 नई दिल्ली।

उद्देश्य :

1. दलित आंदोलन से दलित समुदाय पर करने वाले प्रभाव एवं सामाजिक परिवर्तनों का अध्ययन।
2. दलित आंदोलन से दलितों की राजनीतिक स्थिति का संक्षिप्त अध्ययन।
3. उत्तर प्रदेश की दलित राजनीति में बहुजन समाज पार्टी की भूमिका का अध्ययन।

शोध प्रविधि :

1. ऐतिहासिक वर्णनात्मक एवं विश्लेषण आत्मक पद्धति द्वारा दलित आंदोलन एवं बहुजन समाज पार्टी पर लिखी गई पुस्तकों लिखे भाषणों सरकारी रिपोर्ट पत्रिकाओं तथा संबंधित पत्रों का प्रयोग किया गया है। आता है यह ऐतिहासिक वर्णनात्मक तथा विश्लेषण आत्मक अध्ययन है।

2. तथ्यों का संकलन द्वितीयक श्रोत विषय शीर्षक से संबंधित शोध अध्ययनों आलेखों प्रकाशनों पुस्तकों व इंटरनेट आदि के द्वारा किया गया है।

परिकल्पनाएं :

1. दलित आंदोलन द्वारा दलित जातियों में उनके अपने अधिकारों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित हुआ।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

2. दलित आंदोलन से दलितों में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना जागृत हुई।
3. दलित आंदोलन के परिणाम स्वरुप दलित नेतृत्व वाली राजनीतिक दल उभरे।

Ds4 की इस सफलता से प्रेरित होकर कांशीराम ने 14 अप्रैल ,1984 को बहुजन समाज पार्टी का गठन कर दलित आंदोलन को नयी दिशा दी। आज 2001 में राष्ट्रीय पार्टी है और भारतीय समाज में पहली बार ऐसा हुआ है कि दलित द्वारा बनाये गए राजनीतिक पार्टी को राष्ट्रीय दल का स्तर मिल सका। उत्तर प्रदेश के दलित आंदोलन तो भारतीय जनतांत्रिक व्यवस्था का एक रूप है। प्रतिनिधित्व जनतंत्र रेप्रेजेंटेटिव डेमोक्रेसी का अब भागीदारी जनतंत्र पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी की ओर बढ़ना। वैसे दलित आंदोलन की जनतांत्रिक आंदोलन का प्रकृति है। एक दशक पूर्व में दलितों का प्रतिनिधित्व सवर्ण सत्ताधारी वर्ग किया करते थे या फिर उनके द्वारा रोपे गए कुछ दलित नेता। परन्तु उत्तर प्रदेश में बसपा के उदय के बाद दलितों ने अपना एजेंडा खुद तय किया और सरकारों में 1993 ,1995 (साढ़े चार माह के लिए)और 2001 में 16 महीने और 2007 –2012 के कार्यकाल में अपनी शर्तो पर राज करने का प्रयास किया। 1995 में सरकार बनाने के बाद स्वतंत्र भरता में पहली बार दलित महिला मायावती ने अपनी 11 वर्ष पुराने पार्टी की नीतियों के आधार पर निर्णय लिए। कुछ दलितों को उत्तर प्रदेश का मुख्य सचिव एवं पुलिस महानिदेशक नियुक्त किया गया। बहुतों को जिलाधिकारी एवं पुलिस अधीक्षक बनाया गया। 4. बहुजन समाज पार्टी के गठन के फल स्वरुप दलितों की सामाजिक एवं राजनीतिक विकास अधिकतम हुआ है। अतः भविष्य में स्वतंत्र दलित राजनीतिक आंदोलन से यही संभावना दिखाई देती है कि दलित समाज को संवैधानिक सत्ता की संस्थाओं में भागीदारी दिलवाने के लिए संघर्ष करेगा और आने वाले समय में दलित समाज के मुख्य धारा में अन्य समाजों के समानान्तर सहभागिता निभाएंगे। सामाजिक स्तर पर भी इस आंदोलन में बहुत ही संभावनाओं को जन्म दिया है। स्थिति को नकारा नहीं जा सकता है। आज बसपा 2001 में राष्ट्रीय पार्टी है और भारतीय समाज में पहली बार ऐसा हुआ है कि एक दलित द्वारा बनाए गए राजनीतिक पार्टी को राष्ट्रीय दल का स्तर मिल सका है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ० विवेक कुमार, बहुजन समाज पार्टी एवं संरचनात्मक परिवर्तन, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली,2004
2. रंगराजन, महेश, 'वाय मायावती मेटर्स, सेमीनार, वॉल्यूम 581, नई दिल्ली, 2008
3. पाई सुधा, 'सुधा एसेरशन एंड द अनफिनिश्ड डेमोक्रेटिक रेवोल्यूशन द बहुजन समाज पार्टी, इन उत्तर प्रदेश, कल्चरल सबआर्डिनेशन एंड द दलित चौलेन्ज, वॉल्यूम, 3 , सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली
4. राजन अबेध, माई बहुजन समाज पार्टी, एबीसीडीई पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1994
5. श्रीवास्तव, पंकज, 'मायावती और मीडिया का मोतियाबिंदु ' ,इतिहासबोध, इलाहाबाद ,जुलाई ,2007
6. मोहनदास नैमिसराम, बहुजन समाज, नीलकण्ड प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003
7. सतनाम सिंह, बहुजन नायक कांशीराम, सम्यक प्रकाशन, 2004 ,2008
8. एम० एस ० राव, सोशल मूवमेंट एन्ड द सोशल ट्रांसफार्मेशन, पृ० 158
9. सुधा पाई, 'द स्टेट, सोशल जस्टिस , एन्ड द दलित मूवमेंट : द बी० एस ० पी० इन उत्तर प्रदेश ,सेज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 पृ० 204
10. आर० के० क्षीरसागर, दलित मूवमेंट इन इंडिया एंड इट्स लीडर्स , पृ० 344.

*****